DOI: 10.5281/zenodo.7549612

IARA – International Journal of Humanities, Social Science, Business Management and Commerce,
Vol. 7, Issue. 1, Jan 2023; Pages 01 –06
ISSN (Online): 2583-181X

आधुनिकताः अवधारणा और उदय तथा भारतेंदू काल

प्रो. डॉ. कॅप्टन शिंदे अनिता
प्र- प्रधानाचार्या
महात्मा गांधी महाविद्यालय, अहमदपुर
सदस्य, हिंदी अध्ययन मंडल
स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाड विश्वविद्यालय, नांदेड

आधुनिक शब्द दो अर्थो- मध्यकाल से भिन्नता और नवीन इहलोकिक दृष्टिकोन की सूचना देता है। मध्यकाल अपने अवरोध जड़ता और रूढिवादिता के कारण स्थिर और एकरस हो चुका था, एक विशिष्ट ऐतिहासिक प्रक्रिया ने उसे पुनः गत्यात्मक बनाया मध्यकालीन जड़ता और आधुनिक गत्यात्मकता को यों समझा जा सकता है- रीतीकाल में कला और साहित्य अपने- अपने कथ्य, अलंकृती और शैली में एकरूप हो गए थे, वे घोर श्रृंगारिकता के बँधे घाटों से बह रहे थे। एक ही प्रकार के छंद, एक ही प्रकार के ढंग। आधुनिकता काल में बँधे हुए घाट टूट गए और जीवन की धारा विविध स्त्रोतो में फूट निकली। साहित्य मनुष्य के बृहत्तर सुख- दुःख के साथ पहली बार जुड़ा।

आधुनिक शब्द से जो दूसरा अर्थ ध्वनित होता है, वह है इहलौकिक दृष्टिकोन। धर्म, दर्शन, साहित्य, चित्र, संगीत, नृत्य आदि सभी के प्रति नए दृष्टिकोन का अविर्भाव हुआ। सुधार, परिष्कार और अतीत का पुनराख्यान नवीन दृष्टिकोन की देन है।

आधुनिक ज्ञान- विज्ञान और टेक्नॉलॉजी के फलस्वरूप उत्पन्न मानवीय स्थितियों का नया, गैर रोमांटिक और अमिथकीय साक्षात्कार ‘आधुनिकता’ है। आधुनिकता का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए आवश्यक है कि उसके ऐतिहासिक संदर्भ और प्रवृत्ति को समझ लिया जाए। आधुनिककाल अपने ज्ञान- विज्ञान और प्रविधियों के कारण मध्यकाल से अलग हुआ। यह काल औद्योगीकरण,

*Submission date: 09 Nov 2022 / Acceptance date: 01 Jan 2023 /Available online 11 Jan 2023

नागरीकरण और बौध्दिकता से सम्बण्ध्द है; जिससे नवीन आशाएँ उभरी। देश, धर्म, राष्ट्र,ईश्वर, आदि की नई- नई व्याख्याएँ की जाने लगीं।

आधुनिक ज्ञान विज्ञान ने मनुष्य को बहुत कुछ बुध्दि सम्मत बनादिया था। नीत्शे की इस घोषणा से कि 'ईश्वर', मर गया बौध्दिक जगत में ऐक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। यथार्थ का स्वरूप बदला। पाप- पुण्य, धर्म- अधर्म, अच्छे- बुरे के जो मानदंड थे, धर्म ग्रंथ के जो प्रमाण थे, वे कालबाह्मय हो गए। पुराने मुल्यों का विघटन हो गया। मनुष्य को लगा कि वर्तमान स्थिति में वह असहाय, बेबस तथा फालतू प्राणी है। वैज्ञानिक तरक्की ने भी निश्चयवादी सिध्दान्त को खोखला सिध्द कर दिया। वेज्ञानिकों ने अपने अनुसंधान व्दारा बतला दिया कि न तो कोई सार्वभौम सत्य होता है, न शाश्वत नैतिकता।

अस्तित्ववादी दर्शन ने अपने पूर्ववर्ती दर्शन और विज्ञान अमूर्तता पर आक्रमण किया। उसने कुछ प्रश्न उठाए, जैसे व्यक्ति की व्यग्रता, दुःख, निराशा, अकेलापन, मृत्यु- बोध, स्वतंत्रता, त्रास आदि।इसके साथ ही वह सामूहिकतावाद और निश्चयवाद के विरूध्द भी खड़ा हुआ।वह उन समस्त विचारों के विरुध्द है जो व्यक्ति को अमनुष्य और अस्तित्वहीन बनाते है। उनकी दृष्टि में मनुष्य स्वतंत्र है- वह न कोई वस्तु है, न मशीन है; वह क्रियात्मक शक्ति है। स्वतंत्र निर्णय लेने में समर्थ है और इसके लिए खुद जिम्मेदार है।

हिंदी में विकसित आधुनिकतावाद का प्रयोगशीलता, आधुनिक भावबोध,अस्तित्ववाद, व्यक्तिवाद, स्वच्छदता- विरोध बनाम छायावाद- विरोध, अमूर्त्तता, बौध्दिकता, रूपवादिता, लघुमानव, अनुभव की विशिष्टता, स्मृतिहिनता, संकट- बोध, अजनबीपन, मूल्यहिनता और अराजकता आदि के रूप में रेखांकित किया गया है।

भारतीय धर्म और संस्कृती के संबंध में अँग्रेज प्रशासकों और ईसाई मिशनरियों के आक्रामक रूख के कारण धर्म सुधारकों के लिए धारदार मार्ग से गुजरना आवश्यक था । एक और उन्हे विदेशियों के सामने अपने धर्म तथा संस्कृती की वकालत करनी पड़ी और दूसरी और देशवासियों

के सामने धर्म का नया अर्थापन करना पड़ा।इस प्रकार हर इस संस्क्रांति काल में धर्म का पल्ला पकड़ना बहुत आवश्यक था, क्योंकि धर्म अनिवार्यताः समाज-सुधार के साथ जुड़ा था। राजा राममोहन राय को सती- प्रथा के उन्मूलन के लिए धर्मशास्त्रों की गवाही की आवश्यकता हुई। विद्यासागर नेसिध्द किया की धर्मशास्त्रों में वैधव्य का काई विधान नहीं है दयानंद सरस्वती सामाजिक सुधारों को वैधता देने के लिए वेंदों की और उन्मुख हुए

नई आर्थिक व्यवस्था, पाश्चात्य शिक्षा और नवागत जीवन- पध्दती के कारण इस देश की अपनी पहचान खो गई थी। पश्चिमीकरण और भारतीयकरण की रस्साकशी काफी दिनों तक चली। नवजागरण के अग्रदूतों ने पश्चिमीकरण के विवेकस्मत परिवेश में अपनी संस्कृति को नये ढंग से संघटित करने का प्रयास किया।इसके फलस्वरुप साहित्यकारों ने अतीत को सामने रखकर अपने संस्कृति को ढंग से संघटित करने का प्रयास किया।इसके फलस्वरूप साहित्यकारों ने अतीत को सामने रखकर अपने को पुनःगौरवान्वित अनुभव किया तथा देश में उभरती हुई राष्ट्रिय चेतना को ठोस रूप दिया। आधुनिक काल का अधिकांश साहित्य अपने को पहचानने तथा पाश्चात्य बन्धनों से छुटकारा पाने का इतिहास है।

भारतेन्दु कालः-

हिंदी साहित्य के इतिहास में भारतेंदु युग को ही पुनर्जागरण- काल संबोधित किया है। आ. रामचंद्र शुक्ल ने भारतेंदु हरिश्चन्द्र (१८५०-१८८५) के रचना- काल को दृष्टि में रखकर संवत् १९२५ से १९५० तक की अवधि को नई धारा अथवा प्रथम उथवा प्रथम उत्थान की संज्ञा दी। परंतु अन्य विध्दान उनसे सहमत नहीं हैं। मिश्रबंधुओं ने १९२६-१९४५ वि. तक, डॉ. रामविलास शर्मा ने १९२७- १९५७ वि. तक भारतेंदु युग की व्याप्ति मानी है। भारतेंदु व्दारा संपादित मासिक पत्रिका ‘कविवचनसुधा’ का प्रकाशन १८६८ ई. में आरंभ हुआ, अतः भारतेंदु युग का उदय १८६८ ई. (१९२५) वि. से मानना उचित है।

आलोच्य युग में जनता में जनता में पुनर्जागरण की भावना भरी हुई दिखाती देती है । फलस्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों में न केवल अतिरिक्त सक्रिया थी, बल्कि इन सब में गहन अन्तःसंबंध विद्यमान था। भारतेंदू युगीन कवियों पर इसका स्पष्ट प्रभाव पड़ा। परिणामतः विषय चयन में व्यापकता और विविधता दिखलाई दी। श्रृंगारिक रसिकता, अलंकरण- मोह, रीती-निरुपण, प्रकृति का उद्दपन चित्रण आदि रीतीकालीन प्रवृत्तियों का महत्व कम हुआ।इतना ही नही तो भक्ति तथा नीति को प्रमुख वर्ण्य विषयों के रुप में ग्रहण करने का आग्रह भी नहीं रहा। भारतेंदू ने जनता को उद्‌बोधन प्रदान करने के उद्देश्य से ‘जातीय संगीत’ अर्थात् लोकगीत की शैली पर सामाजिक कविताओं की रचना पर बल दिया । मातृभूमि-प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार, गोरक्षा, बालविवाह- निषेध, शिक्षा- प्रसार का महत्व मद्य निषेध भ्रूण हत्या की निंदा आदि विषयों को वर्ण्य विषय बनाया गया। राष्ट्रीय भावना का उदय भी इस काल की अनन्य विशेषता है। ब्राह्मसमाज, प्रार्थना- समाज, आर्य- समाज, रामकृष्ण- परमहंस और विवेकानंद के विचारों तथा थियॉसॉफिकल सोसाइटी के सिध्दातों का प्रभाव भी जन जीवन पर पड़ रहा था। आर्थिक, औद्योगिक और धार्मिक क्षेत्रों में पुनर्जागरण की प्रक्रिया आरंभ होने लगी थी। पाश्चात्य शिक्षा- प्रणाली ने शैक्षिक क्षेत्र में भी वैयक्तिक स्वतत्रंता की प्रेरणा प्रदान की। ॲंगरेजी- साहित्य के अध्ययन ने अन्य देशों के साथ तुलना करने का अवसर प्रदान किया और इस तरह राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए उचित वातावरण बन सका। मुद्रण- यंत्रों के विस्तार और समाचारपत्रों के प्रकाशन ने भी जन- जागरण में योग दिया।

भारतेंदु हरिश्चंद को ३४ साल और छह महीने की आयु मिली थी। परंतु उन्होंने अपने कर्तृत्व की छाप हिंदी साहित्य पर अमिट रूप में छोड़ी, परिणामस्वरूप इतिहासकारों को भारततेंदु युग नामकरण करना पड़ा। उन्होनें साहित्य की सभी विधाओं में कुशलता के साथ लेखनी चलायी। साथ ही अपने जमाने के साहित्यकारों का भी मार्गदर्शन तथा पथप्रदर्शन किया।

भारतेंदु (१८५०-१८८५) इतिहास प्रसिध्द सेठ अमीचंद की वंश परंपरा में उत्पन्न हुए थे। उनके पिता बाबू गोपालचंद्र ‘गिरिधरदास’ भी अपने समय के प्रसिध्द कवी थे। हरिश्चंद्र ने बाल्यावस्था में ही काव्य- रचना आरंभ की और उनकी कवित प्रतिभा को देखकर उस समय के पत्रकारों तथा साहित्यकारों ने १८८० ई. में उन्हे ‘भारतेंदु’ की उपाधी से सम्मानित किया था। कवि होने के साथ ही भारतेंदु पत्रकार भी थे-‘कविवचनसुधा’ और ‘हरिश्चंद्र चंद्रिका’ उनके संपादन में प्रकाशित होने वाली प्रसिध्द पत्रिकाएँ थीं। नाटक, निबंध आदि की रचना व्दारा उन्होंने खड़ीबोली की गद्य-शैली के निर्धारण में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया था।

भारतेंदु सर्वश्रेष्ठ नाटककार थे उन्होंनं अनूदानित और मौलिक सब मिलकर सत्रह नाटकों की रचना की, जैसे-

१. विद्यासुंदर, २.रत्नावली, ३.पाखण्ड विडम्बन, ४.धनंजय विजय, ५. कर्पूरमंजरी, ६. भारत जननी, ७.मुद्राराक्षस, ८. दुर्लभ बंधु, ९. वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति १०.सत्य हरिश्चंद्र, ११.श्री.चंद्रवली, १२. विषस्य विषमौषधम्, १३.भारत दुर्दशा, १४. नीलदेवी, १५. अंधेर नगरी, १६.सती प्रताप, १७.प्रेमजोगिनी।

भारतेंदू ने भक्ति, श्रृंगार, देश- प्रेम, सामाजिक परिवेश और प्रकृती के विभिन्न संदर्भो को लेकर विपुल कविताएॅं लिखीं। उनकी काव्यकृतीयों की संख्या ७० ह, जिनमें ‘प्रेम- मालिका’, ‘प्रेम- सरोवर’, ‘गीत गोविन्दानन्द’, ‘वर्षा- विनोद’,‘विनय- प्रेम- पचासा’,‘प्रेम- फुलवारी’,‘वेणु- गीति’ आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। उनकी प्रमुख विशेषता यह है कि अपनी अनेक रचनाओं में जहाँ वे प्राचीन- काव्य प्रवृत्तियों के अनुवर्ती रहे, वहॉं नवीन काव्यधारा के प्रवर्तन का श्रेय भी उन्हीं को प्राप्त है। वे राजभक्त के साथ ही देशभक्त थे। दास्य भाव की भक्ति के साथ ही उन्होंने माधुर्य भाव की भक्ति भी की है, नायक- नायिका के सौंदर्य- वर्णन में ही न रमकर उन्होंने उनके लिए नवीन कर्तव्य- क्षेत्रों का भी निर्देश किया है।इतिवृत्तात्मक काव्य- शैली के साथ ही उनमें हास्य- व्यंग्य का पैनानप भी दृष्टिगोचार होता है।

भारतेंदु ने प्राचीन और नवीन का समन्वय किया है। उनके नाटक निबंध में यह स्पष्ट दिखाई देता है। अपने समय के साहित्यकारों का मार्ग प्रशस्त करने के साथ नाटक को नया आयाम देने का, यहाँ तक कि अभिनय व्दारा नाटय मंडली को प्रोत्साहन देने का कार्य आपने क्यिा है।

संदर्भ ग्रंथ :

१. आधुनिक अवधारणा और भारतेंदू काल - राहूल सिंह